



(1936-2009)

ध्यान पत्रिका

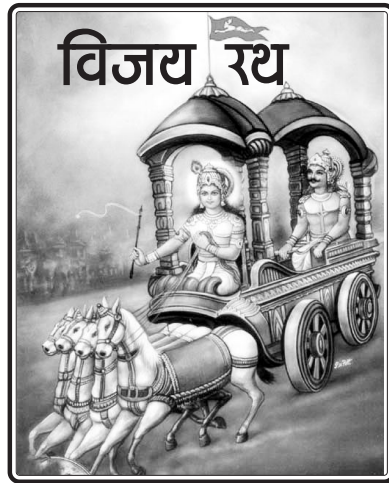
प्रेरक : डॉ० शम्भू नाथ

M.Sc., Ph.D.

वर्ष-21

सितम्बर-2011

अंक-9



असली विजय रथ: अपनी ज्ञान व कर्म रूपी इन्द्रियों पर सवार संयम से मिलता है। मनुष्य का शौर्य और धैर्य: इस रथ के पहिए हैं तथा सत्यता, शीलता: पताका है। बल, विवेक, दम और परोपकार: ये चार उसके घोड़े हैं। जो क्षमा, दया और ममता रूपी डोरी से रथ से जुड़े हैं।

प्रकाशक

ध्यान सत्संग सभा

हिसार (हरियाणा), मो. : 09416164702, 09416041346

मुक्ति का मार्ग

श्री टी० पी० गोयल

100/18, अलीपुर रोड़, कलकत्ता

किसी नगर सेठ के द्वार पर एक संत भिक्षा लेने गए। वहां एक तोता पिंजरे में कैद था। उसने द्वार पर आए संत को देखा, तो बहुत खुश हुआ। भिक्षा ग्रहण कर संत जब बाहर जाने लगे, तब तोते ने कहा : महात्मन्! मैं काफी दिनों से पिंजरे में बंद हूँ। मुक्त आकाश में विचरण करते अपने साथियों को देखता हूँ : तब मन बड़ा व्यथित होता है। “प्राधीन सपनेहु सुख नहीं।” पराधीनता से मुक्ति का कोई उपाय आप मुझे अपने गुरु से पूछकर कृपया बताएं।

संत भिक्षाटन के बाद जब अपने गुरु के द्वार पर पहुंचे तो तोते का प्रसंग सुनाया। तोते का प्रश्न सुनते ही गुरुदेव बेहोश होकर गिर पड़े। सभी शिष्य घबरा गए। थोड़ी देर उपचार के बाद उन्हें होश आया। लेकिन संत ने उनके सामने तोते के प्रश्न को दोहराना उचित नहीं समझा।

दूसरे दिन तोता संत की प्रतीक्षा कर रहा था। जब संत पुनः भिक्षा मांगने पहुंचे, तब तोते ने पूछा कि उनके गुरु ने प्रश्न का कोई उत्तर दिया या नहीं? संत ने कहा, तेरा प्रश्न तो बड़ा अजीब था। पूछते ही गुरुदेव बेहोश होकर गिर पड़े। होश में आने पर प्रश्न दोहराना मुझे उचित मालूम नहीं हुआ। इसलिए उत्तर मिल न सका।

तोता बोला : महात्मन्! गुरुदेव ने आपको मेरे प्रश्न का उत्तर दिया हो या नहीं, मुझे अवश्य दे दिया है। आपका यह उपकार मैं कभी नहीं भूलूंगा। संत को तोते की बात का यह रहस्य समझ में नहीं आया।

अगले दिन तोते ने गुरु के संकेत का प्रयोग किया और पिंजरे में बेहोश होकर गिर पड़ा। सेठ का पूरा परिवार इकट्ठा हो गया : किंतु तोते ने अपनी आंखें नहीं खोलीं। सेठ ने उसे मरा जानकर पिंजरा खुला छोड़ दिया। मौका पाकर तोता मुक्त हो गया और अनंत आकाश में विचरण करने लगा।

संतों ने संसार रूपी पिंजरे से मुक्त होने का भी यही उपाय बताया है : जीते हुए मृतवत हो जाना, जिससे ममत्व रूपी बंधन पैदा न हो। आत्मा की मुक्ति का मार्ग भी यही है।

होनी और करनी

✍ श्री रमेश कुमार अरोड़ा (मो० 9255640384)

इक बून्द से राख की मुट्ठी तक : बस इतनी कहानी तेरी है॥टेक॥
ना बचपन था, न बुढ़ापा होगा : ना ही जवानी तेरी है॥१॥
अबदल! तू आत्मा है : जान जरा तू शरीर नहीं, जो बदलता है।
न अहं, न ही मन है तू : जिसमें परी जैसी चंचलता है।
सुख, सहजता-शीलता एवं पावनता: निशानी तेरी है॥२॥
दिन खाय बिताया है तूने : क्या रात भी सो के गंवाये गा?
अब भी न लगी लौ प्रभु ध्यान में : तो अंत समय पछताएगा।
जब काल का कोई वक्त नहीं : तब तू क्यों लगाए देरी है?३॥
आ! चल ऐ मन, प्रभु चरनन में : अब धूनी वहीं रमाएंगे।
रखकर मस्तक चौखट पर : हम अपना भाग्य जगाएंगे।
गुरुद्वार से नहीं उठेंगे : कह देंगे यह ही तमन्ना हमारी है॥४॥

हर व्यक्ति इस सत्य को मानता है कि होनी सर्व शक्तिशाली है। कभी भी, कहीं भी : कुछ भी हो सकता है। होनी सुखदायी और दुखदायी दोनों होती है। ऐसा इसलिये होता है : क्योंकि जीवन में कर्म की दो दिशाएं हैं-

(1) जीव के उत्थान की दिशा और

(2) जीव के पतन की दिशा।

उत्थान की दिशा पर: जीवन सुख की ओर बढ़ता है और पतन की ओर कर्म होने से : जीवन दु:ख की ओर अग्रसर होता है। जब जीवन दुख की ओर अग्रसर होता है : तब समाज होनी को अनहोनी कहने लगता है। अच्छे और खराब के आधार पर, पुण्य और पाप के आधार पर, दूसरों को सुख और दुख देने के आधार पर: अलग-अलग आध्यात्मिक गुरुओं ने समाज में अलग-अलग कर्मों की व्याख्या की है। शक्ति या ज्ञान : मात्र गुरु से मिलना है। गुरु :भाव से परे क्षेत्र में है, अर्थात् बुद्धि से परे क्षेत्र में है। इस क्षेत्र की शक्ति बुद्धि के आधार पर प्राप्त करना असम्भव है। कहने का तात्पर्य यह है कि बुद्धि से परे क्षेत्र में मन का विचरण: वो कर्म है, जो हमें समय बीतने के साथ साथ जीवन को अनन्त क्षेत्रों में शक्तिशाली बनाता चला जाएगा। बुद्धि से परे होने के कारण: ऐसे कर्मों का आधार 'होनी' होगा। अर्थात् 'करनी' के माध्यम से हम वहां तक पहुंच ही नहीं सकते : जहां हमें होनी ले जा सकती है। होनी का आधार ही: ध्यान (Meditation) अथवा ईश्वर का समर्पन है। □

अजेय सत्ता

✍ डॉ० शम्भूनाथ



(1936-2009)

यह कहा जाता रहा है: कि सत्य के रास्ते पर हमेशा ही जीत होती है।

सत्यमेव जयते

आत्म शिक्षा की कमी में धीरे-धीरे समाज इसका यह अर्थ करने लगा कि सत्य बोलने वाले की हमेशा जीत होती है, जबकि सच तो यह है कि:-

मात्र आत्मा की सत्ता ही सत्य है। इसलिए जीवन में आत्म-सत्ता को बढ़ाने का रास्ता ही सत्य का रास्ता है। आत्म-सत्ता निश्चय ही अजेय है।

आत्म-सत्ता इच्छा-पूर्ति सत्ता है। आत्म-सत्ता से सम्बन्धित ज्ञानः अर्थात् आत्मज्ञान पाने के रास्ते का लोप होने पर मनुष्य सत्य का अर्थ सच बोलना, लगाने लगा। सच बोलना अच्छे-अच्छे कामों का आधार है। धीरे-धीरे समाज में अच्छे-बुरे काम की कांट-छांट होने लगी। समाज अच्छे कामों को पकड़ना और बुरे कामों को छोड़ना, सिखाने लगा। जब आत्म-सत्ता नहीं बढ़ाई जाती : तो वह कम अवश्य होने लगती है। इस सत्ता के कम होने के रास्ते पर अच्छे-अच्छे कर्म सम्बन्धित संस्कार डालने तथा खराब कर्म सम्बन्धित संस्कार न डालने की बात करने लगते हैं। मनुष्य का मन धीरे-धीरे द्वैत के दलदल में फंसने लगता है। द्वैत के दलदल में फंसना हीः मनुष्य के समस्त दुखों का कारण है।

आत्म-सत्ता जीवनी-शक्ति है।

यह ध्यान के अभ्यास के माध्यम से मन में संचित होती है।

जब मनुष्य ध्यान के बाद अपनी नित्य क्रियाओं के क्षेत्र में आता है : तब जीवन के अलग-अलग पहलुओं को मन यह सत्ता प्रदान करता है। मनुष्य जितना ध्यान के अभ्यास में निपुण होता जाता है : उसके जीवन के विभिन्न पहलुओं में यह शक्ति और अधिक क्रियाशील होने लगती है। मनुष्य की सारी दैनिक क्रियाओं का आधार मनुष्य की इच्छाएं ही होती हैं। आत्म-सत्ता इन इच्छाओं की पूर्ति में अपना योगदान देती हैं।

जितनी आत्म-सत्ता होती है, उसी के अनुपात में उसके जीवन के अलग-अलग पहलुओं की इच्छाएं पूरी होती हैं।

इसी लिए सत्य के रास्ते पर चलने के लिए हमेशा हमारे ऋषि-मुनियों ने अपने ग्रन्थों में कहा है। लेकिन आज के निम्न-स्तर की सामूहिक चेतना

के कारण आज का समाज इसका सही अर्थ नहीं लगा पाता। हर मनुष्य के दिल में यह कूट-कूट कर भर गया है कि उसके सुख का कारण जीवन के अलग-अलग क्षेत्रों में की गई क्रिया है : जिसका आधार मात्र बौद्धिक विकास है। यही गलतफहमी है। यही मायाजाल है। इस मायाजाल के दलदल से निकलना बहुत मुश्किल है।

अब हम उस सत्ता को अपने जीवन के अनुभव के क्षेत्र में देखकर : जानने और समझने की कोशिश करेंगे। कहते हैं कि हर पौधे में प्राण हैं। पेड़ सबसे सरल जीवात्मा है। पेड़ के जीवन की क्रियाएं मात्र तना, डालियां, पत्तियां, फूल और फल तक सीमित हैं, लेकिन ये क्रियाएं तभी तक हैं : जब तक पेड़ में जान है। बिल्कुल उसी तरह जैसे :-

मनुष्य के जीवन में क्रियाएं तभी तक हैं : जब तक उसके शरीर में प्राण हैं। शरीर से प्राण के हटते ही : जीवन की क्रियाएं खत्म हो जाती हैं।

बिल्कुल ऐसा ही पेड़ के जीवन में भी होता है, लेकिन प्रश्न यह उठता है कि पेड़ का जीवनदाता कौन है?

हम अच्छी तरह जानते हैं कि पेड़ की जड़ें: जमीन, खाद, पानी, धूप और हवा से एक रस लेती हैं। यह रस: न तो धूप है, न पानी। यह रस ही पेड़ का जीवनदाता है। जड़ के माध्यम से यह जीवनदाता रस: पेड़ के प्रत्येक अंग में पहुंच जाता है। यदि पेड़ के जीवन की क्रियाएं जमीन के ऊपर हैं, तो पेड़ के अंग-अंग को जीवनी शक्ति पहुंचाने वाली जड़ हमेशा ही दूसरे क्षेत्र : यानी जमीन के नीचे है। दूसरे शब्दों में पेड़ की क्रियाओं के क्षेत्र में नहीं है। इसी प्रकार यदि मनुष्य अपने जीवन का निरीक्षण करे: तो यह सरलता से अनुभव हो जाएगा, कि यदि जीवन की तुलना वृक्ष से की जाए, तो वृक्ष रूपी मनुष्य के जीवन का आधार: ‘मन’ होगा। यदि उसकी क्रियाएं बाह्य जगत के वायुमण्डल में हैं : तो मन हमेशा ही

आन्तरिक जगत में है, जिसे पेड़ रूपी जीवन की जमीन कह सकते हैं।

मन मनुष्य की क्रियाओं के क्षेत्र में रह ही नहीं सकता।

मन को जीवनी शक्ति भी उस क्षेत्र से मिलती है : जिस क्षेत्र में जीवन की क्रियाएं नहीं हैं।

लेकिन जब तक जीवन की क्रियाएं होती रहती हैं: अर्थात् जब तक हमारे विचार तथा क्रियाएं बुद्धि के नियंत्रण में रहते हैं, तब तक मन के लिए यह सम्भव नहीं होता कि वह क्रियाओं के जगत को छोड़ दे। इसी कारण हम देखते हैं कि हर प्राणी के लिए आराम अनिवार्य है।

आराम के समय मन क्रियाओं के क्षेत्र को छोड़ देता है और भावातीत क्षेत्र से जीवनी शक्ति लेने में व्यस्त हो जाता है।

जिन्हें यह ज्ञान नहीं होता, उन्हें यह शक्ति केवल सोते समय मिलती है। लेकिन जिन्हें इसका ज्ञान है : उन्हें यह शक्ति जागृत अवस्था में भी मिलती है। वे जागती हुई अवस्था में : एकान्त और अंधेरे में बैठकर ध्यान के अभ्यास द्वारा यह शक्ति लेने लगते हैं। इस तरह दूसरी तरह के व्यक्तियों के जीवन में आत्म-सत्ता, पहली तरह के व्यक्तियों की तुलना में कुछ ज्यादा होती है।

पौधों के बीज हमेशा जमीन में डाले जाते हैं। पेड़ का निचला हिस्सा (तना) हमेशा जमीन पर रहता है और सिरा हमेशा हवा में रहता है। वह जमीन पर कभी नहीं रहता।

आन्तरिक जगत ही ब्रह्मलोक है। भावातीत क्षेत्र ब्रह्मलोक का आसमान है। ब्रह्मलोक का पूरा आसमान एक सूर्य की तरह है और आन्तरिक जगत का सूर्य ही परमात्मा है। मन आन्तरिक जगत की जमीन है।

जिस प्रकार से पृथ्वीलोक में सूर्य की शक्ति पृथ्वी तक आती है:

बिल्कुल उसी प्रकार आन्तरिक सूर्य (परमात्मा) की शक्ति मनुष्य के मन तक पहुंचती है। परमात्मा की शक्ति मन को प्रकाशवाद के माध्यम से तो प्राप्त की जा सकती है : लेकिन विकारवाद के माध्यम से परमात्मा की शक्ति नहीं मिल सकती, भले ही कोई दूसरी शक्ति मिल जाती हो।

मनुष्य उच्चकोटि का प्राणी है। दूसरे शब्दों में सृष्टि का सबसे अधिक गूढ़ (Complicated) वृक्ष है।

मेरे कहने का अर्थ यह है कि वृक्ष दो तरह के फल नहीं दे सकता। लेकिन मनुष्य का जीवन तो एक ऐसे वृक्ष के समान है : जिसमें अनन्त तरह के फल लगते हैं। इसलिए इस वृक्ष की जमीन (मन) में अनन्त तरह के बीज होना आवश्यक है। हर व्यक्ति के लिए यह अनुभव करना बहुत सरल है : कि उसके मन में अनन्त इच्छाएं पड़ी हुई हैं, भले ही कुछ इच्छाएं उभरी हुई हों और कुछ दबी हुई। ये इच्छाएं ही मनुष्य के वृक्ष रूपी जीवन के बीज हैं और इन इच्छाओं की पूर्ति ही इनके फल हैं। सोते समय या ध्यान के समय : जब मन भावातीत क्षेत्र से आत्मशक्ति लेने में सफल होता है (जो कि इन बीज रूपी इच्छाओं के लिए खाद-पानी इत्यादि का काम करती हैं): तब मनुष्य के विवेक के माध्यम से उसके जीवन में कुछ ऐसे स्वाभाविक कर्म होने लगते हैं, जो उसकी अनन्त इच्छाओं की पूर्ति अनन्त स्तर तक करने में सफल हो जाते हैं।

मनुष्य का जीवन तो वह वृक्ष है: जिसका आधार ब्रह्मलोक की जमीन (मन) है और जिसके फल क्रियाओं या इन्द्रियों के क्षेत्र में हैं।

क्रियाओं या इन्द्रियों के क्षेत्र में सत्य की शक्ति : दूसरे शब्दों में आत्म शक्ति के माध्यम से जो भी अपनी इच्छाओं की पूर्ति द्वारा अपने जीवन को सुखी बनाने में सफल हैं, केवल वही अजय हैं। इस अजेयता का एक मात्र कारण आत्म सत्ता है। जो व्यक्ति आये दिन अपने जीवन में तरह-तरह

के विरोध देखता है और इन विरोधों को अपनी इच्छाओं की पूर्ति में अडंगे (बाधा) मानता है : इन विरोधों के कारण अगर निराशा होने लगती है, तो वह अभी यही नहीं समझ पाया है कि उसकी निराशा का कारण उसके जीवन में केवल आत्मसत्ता की कमी है – न कि दूसरों द्वारा विरोध या दूसरों द्वारा किया गया धोखा उस निराशा का कारण है।

भविष्य में भी निराशा से बचने तथा मायाबी दलदल से निकलने का रास्ता : भी आत्म सत्ता बढ़ाने में सफल होना है। और यह तभी सम्भव होगा, जब क्रियाओं की व्यस्तता कम हो और मन निष्क्रियता (Meditation) के सतत अभ्यास द्वारा आत्म सत्ता बढ़ाने को महत्वपूर्ण समझ कर उसके लिए समय निकाले। □

अपनी आत्मा से साक्षात्कार ही : मोक्ष

📖 श्री गंगाधर बंसल (मो० 9416041346)

अपनी आत्मा से साक्षात्कार व एकाकार होने का नाम ही मोक्ष है। यही मानव जीवन का परम सत्य है, अन्यथा यह जन्म निरर्थक है।

शास्त्रों में सांसारिक जीवन को इसीलिए निरर्थक कहा गया है : क्योंकि सारी जिन्दगी हम तमाम दुनियावी चीजों को पहचानने की कोशिश तो करते हैं, पर अपनी ही आत्मा को पहचानने का प्रयत्न नहीं करते। सांसारिक जीवन की आपाधापी में हम सब अपना असली अस्तित्व या पहचान खो देते हैं। मनुष्यों की बड़ी समस्या उनके अज्ञान की वजह से इतनी नहीं है : जितनी उनके इस विश्वास की वजह से है कि उन्हें तमाम विषयों के बारे में बहुत जानकारी है। पर वास्तव में यह धारणा या विश्वास गलत है। पर हम अब अडिग हैं : कि जो हम जानते हैं, वही सही है। सब लोग यही मानते हैं कि वे जानते हैं : कि वे कौन हैं।

पर हम अपने जीवन के 80-90 प्रतिशत तथ्यों के बारे में ही जानते हैं : पर बाकी ?

वे अपने आप नहीं जान सकते। उसके लिए तत्पर होना पड़ेगा। सारा संसार तामस में डूबा हुआ है। यदि इस जीवन में आपने अपनी वास्तविक पहचान नहीं पकड़ी: तो जीवन व्यर्थ ही हुआ।

पर ऐसा तो हो ही नहीं सकता कि कोई दया करके आपको वह ज्ञान दे दे। देगा तो आप लेंगे नहीं। ज्ञान कभी दिया नहीं जाता: लिया जाता है। देंगे तो वह भैंस के आगे बीन बजाने की तरह होगा।

जन्म से ही माता अपने बच्चे को यह करो, वह मत करो : की शिक्षा देती रहती है। पर उसमें से कितनी नसीहत वह स्वीकार करता है ? सुबह से शाम तक : जीवन भर हम वही कार्य करते हैं, जिसमें हमें भौतिक सुख का एहसास होता है।

जन्म से मृत्यु तक (मां के दूध के समय से जीवन के बड़े-बड़े कार्यों तक में), हम केवल सुख व सन्तोष की प्रतीति खोजते हैं, पर किसी को भी पता नहीं : कि असली सुख अथवा आनन्द आपके अन्दर ही है, बाहर नहीं मिलेगा। आत्मा का अर्थ है : अथाह आनन्द, निरपेक्ष ज्ञान। इसीलिए अपना ध्यान भौतिक संसार से हटाकर : अन्तरात्मा पर केन्द्रित करें। एक न एक दिन सभी को इस ओर आना ही पड़ता है। जब यह संसारी शरीर चुकने लगता है : तब हम बड़ी कीमत चुका कर इधर लौटते हैं। जब तक शरीर साथ देता है : इस तथ्य को कोई नहीं समझना चाहता। इसीलिए ठोकरें खाते हैं।

आप सुख, संतोष और आनन्द की खोज हमेशा बाहर चारों ओर करते हैं : पर जानते नहीं कि उसका स्रोत कहां है ?

यदि आप अपनी अंतरात्मा की ओर उन्मुख होने का प्रयास करें : तो धीरे-धीरे एक सुख व संतोष की प्रतीति होगी, जो समय के साथ-साथ अपने आप गहरी होती जाएगी।

कस्तूरी कुण्डल बसे : मृग ढूँढ़े वन माहिं।

ऐसे घट-घट में राम हैं : दुनिया देखे नाहिं।

राम आनन्द के प्रतीक हैं – आप न तो इस समय के जागृत व्यक्ति हैं और न ही गहरी निद्रा या स्वप्नशील चरित्र। वास्तव में आप इन सबसे ऊपर : एक अलग श्रेणी में हैं: जिसे संस्कृत में तुर्या कहते हैं। इस श्रेणी का मनुष्य दूसरों की गलतियां बताने और अपनी वर्तमान परिस्थिति से असंतुष्ट रह कर अपना जीवन व्यतीत करता है। हम कामनाओं से सराबोर हैं। हम सोचते हैं : कि यह कार्य हो गया, तो बेड़ा पार। आप भले ही अपनी प्रगति में सतत् प्रयत्नशील रहें : पर किसी भी सांसारिक वस्तु या विषय में आनन्द खोजना व्यर्थ है। अपने वर्तमान सुख सन्तोष को भविष्य की होने वाली घटना पर बंधक न रखें। हर क्षण आत्मा के आभास में बिताते हुए ध्यान साधना (Meditation) द्वारा अपने कर्तव्य पथ पर चलते रहें, तभी मंजिल मिलेगी।

जगह देख लो तुम एकान्त। शोर नहीं हो: बिल्कुल शान्त ॥

आंख मूंद: बैठो चुपचाप। होने दो जो हो अपने आप ॥

ध्यान नहीं करना है तुमको। मात्र बैठना ही है तुमको ॥

ध्यान लगेगा अपने आप। तुम्हें बैठना है चुपचाप ॥

अब कर दो मन को आजाद। होने लगे राम की याद ॥

कब भागा, अरू कहाँ भगा। बस समझो, यह ध्यान लगा ॥

जब आए तुमको यह याद। भटक गया था मन आजाद ॥

समझो ध्यान गया अब टूट। पुनः करो अब मन को छूट ॥

सुबह-शाम का यह अभ्यास। करवा देगा प्रभु आभास ॥

खूब ध्यान का अभ्यास करते-कराते तथा बहुत परिश्रम करने पर भी स्कूल में बच्चों की संख्या क्यों नहीं बढ़ रही?

ध्यान के साथ जब अपनी मेहनत द्वारा अहंकार छोड़कर : प्रभु पर भरोसा कर लो, तभी सफलता मिलेगी।

“ भागती फिरती थी दुनिया : जब तलब करते थे हम।

जब से छोड़ा हमने इसको : बेकरारी आने को है ॥ ”

झूठे मायावी संसार की आसक्ति छोड़कर सच्चे भगवान को पकड़ो। संसार तो प्रभु की छाया है। उसके साथ ही आ जाएगा।

सभी ध्यान करने वालों के पास अपार धन-माया क्यों नहीं आ जाती?

मेरे जैसे जो अधिक धन रखने में खुश नहीं हैं : तो भगवान उनको नाराज क्यों करें?

धनवान साधक: धन को क्यों बटोर रहे हैं?

हम भगवान की दी हुई सम्पत्ति और धन के मुनीम हैं। उसकी रक्षा का काम प्रभु ने हमें सौंपा है। हम उसका सदुपयोग तो करेंगे : फैकेंगे नहीं। उसके दिए काम को निभाएंगे। जब से बलदेव जी ने कहा है : कि दुकान से घर का निर्वाह होगा, यह भावना छोड़ दोगे। तभी कल्याण होगा। ऐसा करते ही भगवान की कृपा से मेरे ऊपर नोटों की वर्षा होने लगी है।

बढ़िया ध्यान तो छोटे बच्चों का ही लगता है।

आप की बात तो ठीक है। बड़ों पर अधिक सांसारिक संस्कारों के होने के कारण ध्यान के लिए बैठना कठिन होता है। फिर भी **‘जब जागो तभी सवेरा।’** जिस समय भी ध्यान साधना का पता चल जाए : तुरन्त ध्यान के लिए बैठना शुरू कर दें। बचपन से न सही : पिचपन से ही सही। उम्र के झमेले में पड़कर : आलस्य से देरी नहीं करनी चाहिए। करना है जो करो आज : कल हो, क्या जानें? अगली सांस की भी आस नहीं है।

करत-करत अभ्यास के, जड़ मति होत सुजान।

रस्सी आवत जात से, सिल पर पड़त निशान ॥

अभ्यास ही ध्यान का मूल आधार है।

ध्यान के समय मुझे माथे में दर्द शुरू हो जाता है?

यह कोई विकार है। ध्यान के समय उभर जाता है। धीरे-धीरे ठीक हो जाएगा। परन्तु श्री जांगड़ा जी ने कहा : इतनी छोटी अर्थात् 25-30 साल की उम्र में इनमें कोई विकार नहीं है। पड़ोसी के नाते मैं इन्हें अच्छी तरह जानता हूँ। ये ध्यान नहीं बल्कि एकाग्रता करते हैं। अपने माथे और मस्तिष्क में किसी मंत्र, नाम, रूप, विचार आदि को जमाने : स्थिर करने की कोशिश करते हैं। उस कोशिश से तनाव और दर्द होने लगता है। यदि स्वयं को तथा मन को आजाद छोड़कर ध्यान के लिए बैठें : तो इनको कभी सिर दर्द नहीं होगा, अपने अन्दर ईश्वर की अनुभूति होगी तथा आनन्द आने लगेगा। □

बच्चे: कच्चे घड़े के समान

✍️ आचार्य राम सुफल शास्त्री

बच्चे: कच्चे घड़े के समान होते हैं। कच्चे घड़े में जो चाहें चित्रकारी कर सकते हैं। उसी तरह शिक्षक व अभिभावक बच्चे को जैसा चाहें बना सकते हैं। आज के आधुनिक युग में बच्चे तेजी से पाश्चात्य संस्कृति की ओर बढ़ रहे हैं। जो हमारी संस्कृति के लिए खतरा बनता जा रहा है। इसका एक ही कारण है कि इन बच्चों को प्राचीन भारतीय संस्कृति व सभ्यता के उत्तम संस्कारों से वंचित रखा गया है। अच्छे संस्कारों का अभाव ही बच्चों को दिशाहीन कर रहा है।

बच्चों में हो : आध्यात्मिक ज्ञान

आज भौतिकवादी युग में बच्चे अपने रास्ते से भटकते जा रहे हैं। माता-पिता अपने बच्चों को आध्यात्मिक ज्ञान दें, ताकि एक अच्छे समाज का निर्माण किया जा सके। भगवान का वास वहीं होता है: जहां ईमानदारी और प्रेम होता है। बच्चों में नैतिक गुण माता-पिता ही भर

सकते हैं। बच्चे की पहली गुरु मां ही होती है तथा बड़ा होने पर उसका गुरु अध्यापक होता है। समाज में आज अच्छे गुरुओं की कमी है : इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को अपने विवेक में झांक कर कदम उठाना चाहिए। आजकल की शिक्षा पद्धति न तो बालक को शारीरिक दृष्टि से सक्षम बनाती है, न ही मानसिक संतुलन बनाए रखती है और न ही उसे समाज का एक सुसभ्य, सच्चरित्र, निष्ठावान, उत्तरदायी व्यक्ति बनाती है। आध्यात्मिक दृष्टि से तो वह पूर्णतया अनभिज्ञ है। मानवता अपना अस्तित्व खोज रही है और बालक अपना बाल्यकाल खो चुका है।

भौतिक सुखों की प्राप्ति की इस आपाधापी में बचपन जैसे नदारद हो गया है।

वह जल्दी प्रौढ़ हो रहा है एवं कई तरह के मानसिक तनावों से ग्रस्त होता जा रहा है। मनोचिकित्सक से जानें तो बच्चों में अवसाद, अपराधी प्रवृत्तियां और व्यवहार में आने वाले परिवर्तन बढ़ते जा रहे हैं।

इन सबसे बचने के लिए आवश्यक है उन्हें बचपन में जीने दें:

परन्तु आगे जाकर इन परिस्थितियों का सामना करने के लिए उन्हें शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक रूप से परिपूर्ण बनाना होगा और यहीं से दैनंदिन जीवन में साधना का महत्व परिलक्षित होता है। साधना की शुरुआत हम अभी से कर सकते हैं। कम उम्र में साधना की आदत होने पर बालक बड़ा होकर आत्मविश्वास, आत्मतृप्ति, आत्मसंयम एवं आत्मत्याग जैसे गुणों से परिपूर्ण होगा। साधना के कई सौपान हैं। जैसे –

ध्यान का पहला चरण है धारणा।

घंटों ध्यान में बैठने की आवश्यकता नहीं है, केवल 3 बार आधा-आधा घंटा ध्यान ही पर्याप्त है। ध्यान करते समय बार-बार विचार आएंगे।

विद्यालय की अपेक्षाएं, माता-पिता एवं शिक्षकों की अपेक्षाएं तथा स्पर्धात्मक शिक्षा की इस दौड़-धूप में:परीक्षा के दिनों में बालक का तनाव बढ़ जाता है। ऐसे समय वह केवल ध्यान के नियमित अभ्यास द्वारा

ही मानसिक तनाव से मुक्ति सकता है। ऐसा करने से ही बुद्धि की कुशग्रता में वृद्धि, स्मरण शक्ति एवं आत्म विश्वास का बढ़ना तथा विपरीत परिस्थितियों में मन का संतुलन न खोना: सम्भव है। □

ध्यान माला

श्री कुबेर प्रसाद ‘गुप्त कबीर’

दोहा-19 : छूटे तीर समान हम, सकें न रोक प्रभाव।

जल लकीर सम ग्रहण कर: मेटे सकल तनाव॥

अनन्त दूरी और स्तरों से लौटती हुई प्रतिक्रियाओं का समय और रूप बताना और समझना असंभव है। क्रियाएं तो धनुष से छूटे हुए तीर के समान होती हैं: जिन्हें गलत समझने के बाद वापस नहीं लिया जा सकता। पिछले जीवन में और इस जीवन में भी सही ज्ञान न होने तक हम ऐसी अनन्त क्रियाएं कर चुके होते हैं: जिनकी सुखद अथवा दुखद प्रतिक्रियाओं से बचा नहीं जा सकता।

अब प्रश्न यह उठता है कि ऐसी दशा में वर्तमान को दुख-रहित

अर्थात् सुखी बनाने का कोई उपाय है अथवा नहीं ?

यह निश्चित है कि हम पिछली क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं के स्तर पर कुछ नहीं कर सकते: पर उनकी दुखद प्रतिक्रियाओं से बच सकते हैं, यह निश्चित है। मन ही सुख और दुःख का भोक्ता है। अतः हम सत्संग द्वारा अपने मन को ध्यान के अभ्यास से ब्रह्म की अग्नि में तपा कर इतना निखार सकते हैं, इतना शक्तिशाली बना सकते हैं: जिससे उस पर किसी प्रतिक्रिया का प्रभाव इतना और ऐसा ही पड़े, जैसा जल पर खींची गई लकीर का होता है अर्थात् प्रतिक्रिया आई और क्षणों में निष्प्रभावी होकर विलुप्त हो गई। उसका सुख अथवा दुःख अनुभव करने का समय ही नहीं रहा। प्रतिक्रियाओं का दुःख देने की दृष्टि से निष्प्रभावी हो जाना ही: तनाव से मुक्ति है और तनाव-रहित जीवन ही: सुखमय जीवन होता है। □

नोट :- 1. प्रत्येक रविवार को बुधला सन्त मन्दिर नज़दीक बस स्टैंड, हिसार में पारिवारिक सत्संग शाम को 5 बजे से 7 बजे तक होता है। आप सभी सपरिवार सादर आमन्त्रित हैं।

2. ध्यान सम्बन्धी अपने अनुभव, लेख, आलोचना (Comments), अनुभूतियां, प्रश्नोत्तर, शंका-समाधान इत्यादि इस पते पर भेज सकते हैं :-

-सुरेश कुमार गुप्ता

1618, अर्बन एस्टेट-II,

पुष्पा कम्पलैक्स के पीछे, हिसार-125005

ध्यान शिविर-2011 : प्रेरक-डॉ० षाम्भू नाथ जी

10, 11, एवं 12 सितम्बर (शनिवार, रविवार एवं सोमवार)

आप सभी सपरिवार सादर आमन्त्रित हैं।

पंजाबी धर्मशाला, राजगुरु मार्केट (आर्य बाजार), हिसार 9466747600

सत्य नारायण शर्मा (9416164702), गंगाधर बंसल (9255967600)

पंकज सुपुत्र डॉ० बलदेव राज नाशा (9255172880)

ध्यान सत्संग सभा, हिसार (हरियाणा)

PRINTED MATTER